P: ISSN NO.: 2394-0344 RNI No.UPBIL/2016/67980 VOL-3* ISSUE-2* May- 2018
E: ISSN NO.: 2455-0817 *Remarking An Analisation*

# 'साकेत' में अभिव्यक्त भारतीय संस्कृति

**अनिता जैन**
प्राचार्या,
जे0 ए0 वी0 गर्ल्स डिग्री कॉलेज,बड़ौत

**सारांश**

भारतीय–गौरव ग्रंथों की श्रृंखला में साकेत का महत्वपूर्ण स्थान है। यह आधुनिक युग का एक प्रसिद्ध महाकाव्य और खड़ी बोली की सुविख्यात कृति है। यह एक जीवन–काव्य है और सम्पूर्ण रामकथा साहित्य में विशिष्ट स्थान का अधिकारी है। इसका प्रमुख कारण यह है कि इसका आधार राम की वह पावनी कथा है, जो चिरकाल से भारतवासियों का कंठहार रही है। इसके नायक राम भारतीय संस्कृति के परमादर्श है और साकेत का कवि भारतीय संस्कृति का परम उपासक। यही कारण है कि इस महाकाव्य में भारतीय संस्कृति की भव्य झांकी प्रस्तुत की गई है। भारतीय संस्कृति का मूलभूत तत्व है त्याग और वह साकेत के सभी पात्रों–राम, भरत और उर्मिला में कूट–कूट कर भरा पड़ा है। त्याग के लिये अनिवार्य है कर्म; तो साकेत का प्रत्येक पात्र कर्तव्यशीलता का साकार रूप है। जीवनादर्श की चर्चा हो या सामाजिक आदर्श की, धार्मिक आदर्शों की बात हो या राजनैतिक आदर्शों की सभी के एक से बढ़कर एक भव्य चित्र साकेत में देखने को मिलते हैं। साकेत में कवि ने भारतीय संस्कृति के मूलभूत सिद्धान्तों को पाठकों के सम्मुख प्रस्तुत करके विश्व के सम्मुख इस संस्कृति की उत्कृष्टता एवं श्रेष्ठता का प्रतिपादन किया है।

**मुख्य शब्द :** प्रकर्ष, पुरावृत्त, उत्प्रेरित, आख्याता, मन्तव्य, निदर्शन, अभीष्ट, प्रांजल, न्यवसित, समीचीन, परिणति, सम्प्रेरक, भृत्य, दक्ष, प्रणति, मत्सर, संपोषित।

**प्रस्तावना**

गुप्त जी हिन्दी–जगत में राष्ट्रकवि के नाम से जाने जाते है। किन्तु जब हम गंभीरता से चिन्तन करते हैं तो यह स्पष्ट हो जाता है कि राष्ट्रीयता में भी उनका ध्येय संस्कृति है। जिसका प्रतिफलन हमें साकेत में पग–पग पर दृष्टिगोचर होता है। भारतीय संस्कृति मानव–जीवन व्यापी संस्कृति है और साकेत में गुप्त जी ने जीवन को समग्र रूप में ग्रहण किया है। दूसरी बात यह है कि उनके चरित्र नायक राम आर्य, संस्कृति के सबसे महान प्रतिष्ठापक भगवान राम हैं। अतः स्वभावतः ही साकेत का सांस्कृतिक आधार अधिक स्पष्ट और पूर्ण है। डा0 नगेन्द्र के शब्दों में– "साकेत में गुप्त जी ने राम–रावण युद्ध को ही सांस्कृतिक महत्व का बना दिया है। यह एक राजा की दूसरे राजा से बैर–शुद्धिमात्र नहीं है। यह आर्य संस्कृति का कौणप से संघर्ष और उस पर विजय है।"[1] राम की विजय कवि के लिये अपनी संस्कृति की विजय है। अतः वह इसमें आर्य संस्कृति की विजय मानता है।

"आर्य सभ्यता हुई प्रतिष्ठित, आर्य धर्म आश्वस्त हुआ।"[2]

साकेत में कवि ने यह समझाने की चेष्टा की है कि इन सांस्कृतिक विशेषताओं को अपनाकर ही मानव उन्नति के शिखर पर पहुँच सकता है, मानवता की रक्षा कर सकता है, शापित एवं तापित जन की पीड़ा दूर कर सकता है और संपूर्ण मानवों के जीवन को सुख एवं शान्ति प्रदान कर सकता है।

**अध्ययन का उद्देश्य**

गुप्त जी भारतीय–संस्कृति के आख्याता हैं। साकेत में उनकी इसी भावना ने प्रकर्ष प्राप्त किया है। इसकी कथावस्तु के रूप में कवि ने जो पुरावृत्त स्वीकार किया है, उसमें अतीत गौरव और प्राचीन संस्कृति का मन्तव्य है। वे सर्वत्र आर्य धर्म की प्रतिष्ठा करते और उसके मौलिक तत्वों की ओर पाठकों को उत्प्रेरित करते दृष्टिगोचर होते हैं। साकेत का सांस्कृतिक आधार शुद्ध भारतीय है। इसलिये प्रस्तुत शोध–लेख में हमारा उद्देश्य केवल यह स्पष्ट करना है कि कवि ने साकेत में भारतीय संस्कृति के आदर्शों का प्रतिफलन किस प्रकार किया है।

**साहित्यावलोकन**

मेरी जानकारी के अनुसार पिछले लगभग दस वर्षा मे साकेत पर इस प्रकार का कोई कार्य नहीं हुआ है।

**शोध–प्रविधि**

प्रस्तावित शोध–पत्र में मननात्मक शोध की निरूपणात्मक व्याख्यात्मक और मूल्यांकन परक विधियों को अपनाया गया है। यहाँ प्रमुखतया शोधपरक वस्तुनिष्ठ विधि का प्रयोग किया गया है।

**विषय–प्रवेश**

किसी भी कृति की सांस्कृतिक दृष्टि से समीक्षा करने के लिये सर्वप्रथम संस्कृति शब्द का अर्थ स्पष्ट करना अत्यावश्यक है। 'संस्कृति' शब्द का अर्थ बड़ा व्यापक है। सामान्यतया हम कह सकते हैं कि संस्कृति मानव जीवन की वह अवस्था है, जहाँ उसके प्रकृत राग–द्वेषों का शमन हो जाता है। यंही संस्कृति का जन्म होता है। यदि संक्षेप में कहना चाहें तो हम कह सकते हैं कि सामयिक–जीवन की आन्तरिक, मूल प्रवृत्तियों का सम्मिलित रूप ही संस्कृति है। संस्कृति को प्राप्त करने के लिये जीवन के अन्तस्तल में प्रवेश करना पड़ता है। जड़ता से चैतन्य की ओर, शरीर से आत्मा की ओर तथा रूप से भाव की ओर बढ़ना ही उसका उद्देश्य है। यह तो हुआ संस्कृति का आन्तरिक रूप और उसका बाह्य रूप है–सभ्यता, आचार–विचार, परम्परायें, शिल्प, कला और साहित्य। डा0 सत्यकेतु विद्यालंकार की मान्यता है कि "मनुष्य चिन्तन द्वारा अपने जीवन को सरस, सुन्दर और कलामय बनाने के लिये जो यत्न करता है, उसका परिणाम संस्कृति के रूप में प्राप्त होता है।" (भारतीय संस्कृति और उसका इतिहास)।

प्रत्येक देश की अपनी एक संस्कृति होती है, जिस पर उसकी जलवायु, भौगोलिक स्थिति तथा ऐतिहासिक परम्पराओं का प्रभाव होता है। भारत की भी अपनी एक संस्कृति है और विश्व की सबसे प्राचीन एवं पूर्ण संस्कृति है। अपने देश की संस्कृति का प्रभाव तो सभी कवियों पर थोड़ा बहुत पड़ता ही है, परन्तु जिन मनस्वियों की कविता लोकमंगल की भावना से प्रेरित होकर अपने देश और जाति की संस्कृति की प्रतिष्ठा एवं सुरक्षा करती है, वें अनेक नहीं होते। हमारे तुलसी, प्रसाद और गुप्त जी ऐसे ही कवि हैं। गुप्त जी हिन्दी जगत में राष्ट्र कवि के नाम से विख्यात है, किन्तु यदि सूक्ष्म दृष्टि से देखे तों यह स्पष्ट हो जाता है कि राष्ट्रीयता में भी उनका क्षेत्र संस्कृति है। भारत में तो वे जन्में ही हैं। अतः उनके शरीर के प्रत्येक रोम में भारतीय–संस्कृति का न्यवसित होना स्वाभाविक है। भारतीय–संस्कृति के कवि के रूप में वें हिन्दी की अनुपम विभूति हैं।

भारतीय गौरव–ग्रंथों की महान श्रृंखला में कविवर गुप्त द्वारा प्रणीत 'साकेत' का महत्वपूर्ण स्थान है। इसकी कथागत भौलिकता एवं नवीनता, भावगत गुरूता एवं गम्भीरता तथा भाषागत प्रांजलता एवं प्रौढ़ता ने सहृदयों को आकृष्ट किया है। यह संपूर्ण रामकथा साहित्य में विशिष्ट स्थान का अधिकारी है।

साकेत का सांस्कृतिक आधार तो शुद्ध भारतीय है ही–इसलिये हमें यहाँ केवल यह देखना है कि–यहाँ पर कवि ने भारतीय संस्कृति के आदर्शों का प्रतिफलन किस प्रकार से किया है। इसके लिये हमें सर्वप्रथम साकेत में वर्णित जीवनादर्श पर विचार करना होगा, क्योंकि संस्कृति की मूल प्रेरणा इसी आदर्श से मिलती है। तत्पश्चात् सामाजिक, धार्मिक, पारिवारिक, राजनैतिक आदर्शों और भौतिक जीवन की रीति नीति का विवेचन समीचीन होगा, क्योंकि संस्कृति के ये ही अंग है और मेरा विचार है कि इन्हीं के सहारे हम साकेत की सांस्कृतिक चेतना को स्पष्ट कर सकते हैं।

**जीवनादर्श**

भरत और राम 'साकेत' के आदर्श चरित्र हैं, उर्मिला का स्थान प्रधान चरित्र का है। राम और भरत दोनों के चरित्र में तत्कालीन जीवन का आदर्श प्रतिबिम्बित हुआ है। इन दोनों विभूतियों के जीवन का आदर्श त्याग है। इस त्यागवृत्ति में ही उनके व्यक्तित्व की समस्त उदात्तता मूर्तिमन्त हुई है। परन्तु यह त्याग वैराग्य पर आधारित नहीं अपितु अनुराग से सम्पोषित है। "यह त्याग भावुकता का प्रसाद है, ज्ञान का परिणाम नहीं।[3] इससे स्पष्ट है कि जीवन का महत्व अपनी जगह पर सुरक्षित है, वह त्याज्य नहीं है और सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि यह त्याग कर्म पर आधारित है, कर्तव्यबोध ही उसका प्राण है। 'साकेत' में केवल राम और भरत ही नहीं अपितु सभी पात्रों के जीवन का आदर्श कर्तव्यशीलता है। डा0 नगेन्द्र के शब्दों में–'विघ्नों पर विजय प्राप्त कर सुख का अर्जन और उपभोग– यह हैं पाश्चात्य आदर्श। परन्तु हम भारतीयों का आदर्श दुःखों पर विजय प्राप्त कर सुख का अर्जन एवं उपभोग करना नहीं, हमारे सुख की चरम परिणति है, उसको त्यागने में। इसी से नर को ईश्वरता प्राप्त होती है और यह भूतल स्वर्ग बन जाता है। यही हमारे जीवन का आदर्श है और ठीक यही साकेत का आदर्श है।"[4]

**पारिवारिक जीवन की झांकी**

मनुष्य निसर्गतः एक सामाजिक प्राणी है, वह समाज में जन्म लेता है, विकसित होता है और उसके जीवन की परिसमाप्ति भी उसी में होती है। सामाजिक सम्बन्धों में उसका पहला सम्बन्ध पारिवारिक होता है। परिवार ही उसके जीवन की प्रथम पाठशाला होती है, जहाँ वह विकास का आरम्भिक पाठ पढ़ता है। इसलिये यह स्पष्ट है कि इस विद्यालय का वातावरण जितना निर्विकार, सहज, सम्प्रेरक एवं उत्साहवर्धक होगा, शिशु मानव उतना ही श्रेष्ठ बनेगा। 'साकेत' के प्रणेता गुप्त जी इस तथ्य से भली भांति परिचित थे, इसलिये साकेत में एक आदर्श परिवार की भव्य झांकी देखने को मिलती है। साकेत में वर्णित दशरथ परिवार एक आदर्श हिन्दू परिवार है, जिसमें माता–विमाता, भाई–भाभी, पति–पत्नी, जेठानी–देवरानी आदि सभी प्रकार के सम्बन्ध वाले सदस्य है। इतना ही नहीं, प्रत्युत भृत्यवर्ग भी इसी परिवार की सीमा में सिमट आया है। गुप्त जी के अनुसार उस समय के सभी सुखी परिवारों की यह विशेषता थी–

"एक तरू के विविध सुमनों से खिले
पौरजन रहते परस्पर हैं मिले,
एक भी आंगन नहीं ऐसा यहाँ
शिशु ने करते हो कलित क्रीड़ा जहाँ

कौन है ऐसा अभागा गृह कहो
साथ जिसके अश्व गौशाला न हो।"[5]

पारिवारिक–जीवन में सर्वाधिक महत्व माता–पिता का होता है, क्योंकि स्त्री माता बनती है और पुरूष पिता और दोनों के संयोग से ही परिवार का विकास होता है। परन्तु इस पारिवारिक जीवन का आनन्द वहीं है, जहाँ पिता अपनी सन्तान को सुशील एवं समर्थ बनाने में दत्तचित हो और माता गृहस्थ के कार्य में दक्ष हो और सन्तान उनकी आज्ञा का अक्षरशः पालन करती हो। साकेत में गुप्त जी ने एक ऐसे ही सुसंस्कृत, आदर्श परिवार की झांकी प्रस्तुत की है, जिसमें राजा दशरथ की तीनों रानियाँ अपने व्यवहार एवं आचरण से परिवार को आनन्द एवं मोद से परिपूर्ण रखती हैं। जैसी आदर्श रानियाँ है, अर्थात माताएँ है, वैसे ही आदर्श पिता राजा दशरथ हैं, जो पुत्र के प्रेम में अपने प्राण तक न्यौछावर कर देते हैं। जहाँ माता–पिता इतने महान होंगे, वहाँ की सन्तानें भी निश्चित महान होगी। इसलिये कवि ने राजा दशरथ के चारों पुत्र और पुत्रवधुओं का वर्णन करते हुए परिवार में आदर्श सन्तान के स्वरूप को इस प्रकार अंकित किया है–

"राम सीता धन्य धीराम्बरा इला,
शौर्य सह सम्पत्ति, लक्ष्मण उर्मिला।
भरत कर्ता, माण्डवी उनकी क्रिया,
कीर्ति सी श्रुतिकीर्ति शत्रुघन प्रिया।
ब्रह्म की है, चार जैसी पुत्रियां,
ठीक वैसी चार माया मूर्तियां।
धन्य दशरथ–जनक पुण्योत्कर्ष है,
धन्य भगवद् भूमि भारतवर्ष हैं।"[6]
ऐसी सन्तान ही एक आदर्श परिवार,
समाज और देश का आधार होती है।

परिवार का सबसे प्रमुख अंग दाम्पत्य जीवन है, जिसके प्रमुख अवयव हैं– पति और पत्नी। आदर्श पति वह है जो अपनी प्रिया के सुख–दुःख का ध्यान रखते हुए सदैव उसके हित की कामना करें, उसका संरक्षण करें, क्योंकि पत्नी से ही पति का जीवन सम्पूर्ण होता है। साथ ही पत्नी का आदर्श यह है कि वह अपना सर्वस्व पति के चरणों में समर्पित करें, पति के अनुकूल जीवन व्यतीत करते हुए उसी को अपने समस्त आन्तरिक सुख–दुःखों का स्थान समझे और अपने अवलम्बन रूप पति की आज्ञा का पालन करते हुए अपने भार को हल्का करें। ऐसे आदर्श पति–पत्नी के व्यवहारिक जीवन की झांकी अनेक स्थलों पर देखने को मिलती है। भारतीय परिवार की आदर्श पत्नी कभी नहीं चाहती कि उसके परिवार में छोटी–छोटी बातों पर भाईयों के बीच कलह हो। वह सदैव उसे बचाने का प्रयास करती है। साकेत में महारानी सीता ऐसी ही आदर्श पत्नी के रूप में चित्रित हैं, जो राम के राज्याभिषेक होने पर राम से स्पष्ट रूप से कहती है कि अभी तक तो चारों भाई साथ ही साथ समान सुख भोगा करते थे, परन्तु आज आप अकेले का राज्याभिषेक क्यों हो रहा है। परन्तु राम भी आदर्श पति है इसलिये वे सीता को समझाते हैं कि मैं बड़ा होने के कारण राज्य का अधिकारी अवश्य हूँ, पर सभी भाईयों के सहयोग से ही राज्य करूंगा–

"रहेगा साधु भरत का मंत्र, मनस्वी लक्ष्मण का बल–तन्त्र।
तुम्हारे लघु देवर का धाम, मात्र दायित्व हेतु है राम।"[7]

पति–पत्नी के साथ–साथ सास–बहु के सौहार्दपूर्ण सम्बन्धों की झांकी भी हमें साकेत में देखने को मिलती है। राजा दशरथ की तीनों रानियाँ अपनी बहुओं के साथ मातृवत् व्यवहार करती हैं और बहुएँ बेटी की भांति माँ समझ उनके कार्य में सहयोग एवं सहायता देती है। पूजा के समय सीता कौशल्या को पूजा की सामग्री प्रदान कर उसको सहयोग करती है और वही सीता जब वन जाते समय वल्कल वस्त्रों के लिये हाथ बढ़ाती हैं तो कौशल्या चीत्कार कर उठती है–

"बहू! बहू! माँ चिल्लाई, आँखे दूनी भर आई
हाथ हटा ये वल्कल हैं। यदि छू भी जावेंगे
तो छाले पड़ जावेंगे। कोसल वधु विदेह लली
मुझे छोड़कर कहाँ चली।"[8]

साकेत में जिस आदर्श परिवार की चर्चा है, उसकी सीमाएं भृत्यवर्ग तक भी फैली हैं। ये दास, दासियाँ दशरथ परिवार के अभिन्न अंग हैं। मन्थरा मात्र दासी थी, किन्तु उसे उदास देखकर कैकेयी ने विकल भाव से पूछा–

"अरी तू क्यों उदास है, वत्स जब कल होगा युवराज।"[9]

सुमन्त को राम लक्ष्मण काका कहते हैं और सुमन्त उन्हें स्नेह से भैय्या कहकर पुकारते हैं। इस प्रकार दशरथ परिवार में भृत्य वर्ग के लिये पर्याप्त प्रेम और सहानुभूति का वातावरण था।

इस प्रकार गुप्त जी ने भारतीय संयुक्त परिवार की सुन्दर एवं सजीव झाँकी अंकित करते हुए माता–पिता, पुत्र–पुत्रवधु, पति–पत्नी, भाई–भाई आदि सभी के कर्तव्य एवं व्यवहार का सफल चित्रण कर यह समझाया है कि मानव, समाज और राष्ट्र का पूर्ण विकास परिवार के द्वारा ही संभव है।

**सामाजिक आदर्श**

साकेत में जिस सामाजिक जीवन का वर्णन है, उसमें भारतीय संस्कृति कूट–कूट कर भरी है। सामाजिक जीवन के लिये अनिवार्य है–मर्यादा, और उसकी सम्यक व्यवस्था के लिये आवश्यक है कि व्यक्ति स्वयं को दूसरों के सापेक्षता में देखें, अपने हित का दूसरे के हित से समन्वय करें। प्रत्येक मनुष्य का चिन्तन होना चाहिये–

"केवल उनके ही लिये नहीं यह धरणी,
है औरों की भी भारधारिणी भरणी।
जनपद के बन्धन मुक्ति हेतु हैं सबके,
यदि नियम न हो, उच्छिन्न सभी हौ कबके।"[10]

भारतीय समाज–विधान के मुख्य अंग हैं– वर्ण व्यवस्था और आश्रम धर्म। साकेत में इन दोनों का गौरव स्वीकृत है, परन्तु उनमें मध्ययुग के विकार नहीं है। साकेत में वर्ण व्यवस्था का शुद्ध मूल रूप मिलता है। ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र सभी का अपना निश्चित स्थान है। ब्राह्मण पूज्य है, किन्तु केवल तब तक जब तक वह अपने आदर्शों का पालन करता है। शूद्रों की शूद्रता का भी तिरस्कार नहीं है। राम गुहराज को अपना सखा समझते है, उसको अपने अंक में भरकर उसका स्वागत करते है। सीता किरात और भील बालिकाओं के साथ सखी का सा व्यवहार करती हैं।

किसी भी समाज की उच्चता का मापदंड उसकी स्त्रियां होती हैं, जिस समाज में स्त्रियों को जितना अधिक सम्मान मिलता है। उस समाज की संस्कृति उतनी ही महान होती है।

साकेत का कवि इस दृष्टि से नारी–पात्रों के चरित्रांकन में बड़ा ईमानदार रहा है। उर्मिला, माण्डवी, सुमित्रा आदि के चरित्र बड़े ही प्रेरक और नारी–समाज के लिये गौरवपूर्ण हैं। वे गृहलक्ष्मी हैं– वहाँ उनका साम्राज्य है। इससे बाहर क्षमता होने पर भी भारतीय नारी प्रायः नहीं जाती। माण्डवी जैसी सुयोग्य स्त्री भी राजनीति विषयक वार्तालाप सुनने के लिये भरत से पूर्व आज्ञा लेती है। आवश्यकता पड़ने पर वे कैकेयी और उर्मिला की भांति रण–चण्डी का रूप धारण कर सकती हैं, फिर भी माण्डवी के द्वारा राम की सहायता के लिये लंका जाने की बात कहे जाने पर साकेतकार का यही कहना है–

"क्या हम सब मर गये हाय! जो तुम जाती हो,
या हमको तुम आज दीन–दुर्बल पाती हो।
घर बैठो तुम देवि। हेम की लंका कितनी।
मारेंगे हम देवि, नहीं तो मर जावेंगे।
अपनी लक्ष्मी लिये बिना क्या घर आवेंगे?
तुम इस पुर की ज्योति,अहो यों धैर्य न खोओ,
प्रभु के स्वागत हेतु गीत रच थाल संजोओ।"[11]

क्योंकि उनका अपमान आर्यों को सहन नहीं है। हाँ वे युद्ध कार्य में दूसरी प्रकार सहायता कर सकती है, उनका कार्य है आश्वासन देना और सुख की व्यवस्था करना।

इसके अतिरिक्त साकेत में भारतीय समाज में प्रचलित रीति–रिवाजों और परम्पराओं का भी वर्णन मिलता है। भारतीय संस्कृति में मांगलिक अवसरों पर प्रायः मस्तक पर रोली और अक्षत लगाने का रिवाज है। साकेत में माता कौशल्या भी इसी कारण राज्याभिषेक के दिन अपने घर में मांगलिक उत्सव मनाते हुए अपने पुत्र के सिर पर रोली और अक्षत लगाने की बात कर रही हैं–

"बहू! तनिक अक्षत रोली,
तिलक लगा दूँ– माँ बोली।"[12]

भारतीय संस्कृति में स्त्रियाँ अपने पति का नाम नहीं लेती। सीता भी वनमार्ग में स्त्रियों को राम का परिचय बड़े संकोच के साथ इस प्रकार देती है–

गोरे देवर–श्याम उम्र के ज्येष्ठ हैं।

भारतीय संस्कृति में गुरू का स्थान अत्यन्त महत्वपूर्ण है। यही कारण है कि साकेत में गुरू वशिष्ठ के आगमन पर वन को जाते राम गुरू को देखते ही नतमस्तक होकर उनके चरण स्पृश करते हैं। राम अपनी जन्मभूमि को बड़ा महत्व देते है और उसे जननी के समान मानते हैं। इसी कारण वन जाते समय अपनी जन्मभूमि के प्रति अटूट प्रेम एवं प्रगाढ़ श्रृद्धा रखते हुए कहते हैं–

"जन्मभूमि ले प्रणति और प्रस्थान दे,
हमको गौरव, गर्व और निज मान दें।"[13]

भारतीय संस्कृति में तीर्थस्थानों और मानव संस्कारों का बड़ा महत्व है। पहले यहाँ सोलह संस्कार प्रचलित थे। अब केवल जन्म विवाह और मृत्यु सम्बन्धी तीन संस्कार तो सर्वत्र प्रचलित है।

इसके अतिरिक्त कुछ जातियों में कर्णछेदन, उपनयन तथा विधारंभ संस्कार भी किये जाते हैं। साकेत में अन्य संस्कारों का उतना वर्णन नहीं मिलता, केवल अन्त्येष्टि संस्कार का वर्णन बड़ी सजीवता से मिलता है। राजा दशरथ के अन्त्येष्टि संस्कार के लिये सारी सेना सजायी जाती है, चारों ओर दुंदुभी बज उठती है, सूत, मागध और बंदीजन विजय गीत गाते हैं और बड़ी धूमधाम के साथ यह संस्कार किया जाता है।

इस प्रकार साकेत में चित्रित सामाजिक जीवन में हमें अपनी सांस्कृतिक परम्पराओं के दर्शन पग–पग पर होते हैं।

**धार्मिक आदर्श**

गुप्त जी एक उदार वैष्णव भक्त कवि हैं। राम में उनकी अनन्य भक्ति है। यदि राम ईश्वर हैं तो वे ईश्वरोपासक हैं और यदि वह ईश्वर न होकर मानव हैं तो उनकी आस्था उन आराध्य राम से भिन्न और किसी में नहीं है। क्रियात्मक रूप में कवि का आर्य धर्म के सभी अंगों में पूर्ण विश्वास है। वेद और यज्ञ, जप, तप, व्रत, पूजा आदि सभी उनको मान्य हैं। वेद आर्य संस्कृति का आधार है और यज्ञ उसका प्रमुख साधन। इसलिये राम कहते हैं–

"उच्चारित होती चले वेद की वाणी
गूंजे गिरि कानन सिन्धु पार कल्याणी
अम्बर में पावन होम धूम लहराये।"[14]

व्रत, पूजा आदि का साकेत में बार–बार उल्लेख हुआ है, उर्मिला की माता अपनी कन्याओं को गौरी का पूजन करने भेजती हैं, स्वयं व्रत करती हैं।

इसके साथ–साथ अपने आदर्शों की चरम स्थिति का विकास भारतीय मानव जिसमें देखता है, उसी को ईश्वर का रूप समझकर अपनी श्रद्धा और विश्वास समर्पित कर देता है। यह तथ्य गुप्त जी की निम्न पंक्तियों में स्पष्ट परिलक्षित होता है–

अलक्ष की बात अलक्ष जानें,
समक्ष को ही हम क्यों न मानें?
रहे वही प्लावित प्रीति धारा,
आदर्श ही ईश्वर है हमारा।"[15]

सारांश यह है कि कवि ने साकेत में भारतीय संस्कृति के धार्मिक विचारों को विभिन्न स्थानों पर व्यक्त किया है। ये विचार एकदेशीय होकर भी सार्वभौमिक हैं और एक वर्गीय होकर भी मानव मात्र के लिये हितकारी हैं। क्योंकि इनमें मानव–जीवन का समुन्नत बनाने वाले तत्व निहित हैं।

**राजनीतिक आदर्श**

साकेत में वैसे तो साम्यवाद, लोकतन्त्र आदि विभिन्न विचारधाराओं का व्याख्यान बड़ा स्पष्ट मिलता है। किन्तु कवि ने भारतीय संस्कृति के अनुरूप सबसे गहरी आस्था राजतन्त्र में ही प्रकट की है। हमारी संस्कृति में राजा का गौरवपूर्ण स्थान है। किन्तु राजा में असाधारण योग्यता लोकसेवा की भावना होनी चाहिये। उसे स्वेच्छाचारी एवं अधिकार दृप्त नहीं होना चाहिये। राजा का कुलीन और ज्येष्ठ पुत्र होना भी अनिवार्य है। इस

प्रकार भारतीय राजतन्त्र और प्रजातन्त्र में थोड़ा ही अन्तर रह जाता है, फिर भी सजा का अस्तित्व है ही, पर गुप्त जी की दृष्टि में वह जनता का सेवक मात्र है और आपके ये विचार साकेत में इस प्रकार व्यक्त हुए है–

"तात राज्य नहीं किसी का वित्त,
वह उन्हीं के सौख्य शान्ति निमित्त
स्वबलि देते हैं, उसे जो पात्र,
नियत शासक लोक सेवक मात्र।"[16]

राजा और प्रजा के बीच शासक और शासित का अन्तर नहीं है। राज्य के नियम राजा और प्रजा दोनों पर समान रूप से लागू होते हैं–

"शासन सब पर है, इसे न कोई भूले–
शासक पर भी, वह न फूलकर ऊले।"

इतना ही नहीं कभी तो कवि इससे भी आगे बढ़कर साम्यवाद की घोषणा करता प्रतीत होता है। आपका राजनीतिक दृष्टिकोण, अत्यन्त उदार एवं विशाल है। भारतीय संस्कृति की यह विशेषता रही है कि यहाँ कभी किसी की दृष्टि अपनी ही उन्नति एवं वैभव तक सीमित नहीं रही, यही कारण है कि यहाँ की राजनीतिज्ञों ने अपने विकास के लिये या स्वयं को समृद्धिशाली बनाने के लिये कभी दूसरे देशों पर अन्याय करने की सलाह नहीं दी। अपितु अखिल विश्व की रक्षा के लिये साधन खोजने में रत रहे। साकेत में गुप्त जी के ऐसे ही विचार विभीषण के मुख से व्यक्त हुए हैं–

"तात देश की रक्षा का ही कहता हूँ मैं उचित उपाय,
पर वह मेरा देश नहीं जो करें दूसरों का अन्याय।
किसी एक सीमा में बंधकर रह सकते हैं क्या प्राण।"[17]
एक देश क्या अखिल विश्व का तात चाहता हूँ मैं त्राण।

यह है भारतीय संस्कृति में विकसित राजनीतिक आदर्श जिनका निरूपण साकेत में स्थान–स्थान पर मिलता है।

**रीति, परम्परायें और विश्वास**

प्रत्येक देश की संस्कृति वहाँ की रीति, नीति, प्रथा, परम्पराओं और विश्वास में निहित होती है। भिन्न–भिन्न देशों की रीति, नीति और नैतिक सिद्धान्त भिन्न होते हैं। नीति का सामान्य अर्थ होता है धर्म; और धर्म की व्याख्या है– धारयते इति धर्मः। अर्थात् जीवन को सम्यक रूप से यापन करने के लिये जो आवश्यक होता है, उसे धारण करना धर्म है। साकेत में धर्म के दसों अंगों का पूर्ण निदर्शन है। नैतिकता का पालन करने के लिये शिष्टाचार एवं लोक–मर्यादा का पालन करना सर्वथा अपेक्षित है। 'साकेत' के सभी प्रमुख पात्र शिष्टाचार एवं लोक मर्यादा के पालन में अत्याधिक जागरूक दिखाई देते हैं। राम माता–पिता की आज्ञा का प्राण–पण से पालन करते हैं, गुरूजनों के सम्मुख सदैव शिष्ट–व्यवहार करते हैं, पर नारी पर दृष्टिपात नहीं करते और काम, क्रोध, मद, मोह, लोभ और मत्सर पर विजय प्राप्त करते हुए जीवन व्यतीत करते हैं। राजरानी सीता और उर्मिला भी नैतिकता की साकार प्रतिमायें हैं। उनका सास–ससुर के प्रति आदर एवं श्रद्धा का भाव तथा आत्म–संयम आदि नैतिकता के उदाहरण हैं। लक्ष्मण वधू उर्मिला का त्याग, तपस्या पूर्ण विरह–विदग्ध जीवन और विरह के क्षणों में "मुझे फूल मत मारो" वाले पद में दी हुई काम को तीव्र फटकार इस तथ्य का भी सूचक है कि उर्मिला में कितना आत्म–संयम, इन्द्रिय–निग्रह और पति–परायणता है। यही बात भरत और माण्डवी तथा शत्रुघन और श्रुतिकीर्ति के जीवन में भी परिलक्षित होती है।

प्रत्येक देश के सामाजिक जीवन में अनेक प्रथाएं और रीति–रिवाज प्रचलित होते हैं, जिनमें वहाँ की संस्कृति संरक्षित रहती है। इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कवि ने भारतीय समाज में प्रचलित अनेक परम्पराओं का साकेत में चित्रण किया है। उदाहरण के लिये हमारे देश में पिता की मृत्यु पर पुत्र द्वारा श्रद्धांजलि देने की परम्परा है। इसलिये साकेत समाज के चित्रकूट पहुँचने पर जब श्रीराम को पिता की मृत्यु का समाचार मिलता है, तो वनवासी राम वन में उपलब्ध पत्र, पुष्प और फल श्रद्धांजलि के रूप में समर्पित कर श्राद्ध क्रिया को पूर्ण करते है। इसके अतिरिक्त सती–प्रथा, स्वयंवर, अभिषेक और उपवास आदि पर भी साकेत में प्रकाश डाला गया है। महाराज दशरथ के निधन पर कौशल्या का संसार लुट गया। उन्हें जीवन निस्सार लगने लगता है। इसलिये वे पति–देह के साथ सती होना ही श्रेयस्कर समझती हैं तो गुरू वशिष्ठ उनके इस निर्णय को अविचारपूर्ण बताते हुए उन्हें समझाते हैं।

साकेत में योग, शाप, सौगन्ध, शकुन आदि का भी प्रसंगानुसार उपयोग किया गया है। योग क्रियाओं में भारतीयों का विश्वास आरम्भ से ही रहा है। चित्तवृति के निरोध से अप्राकृतिक कार्य भी सिद्ध हो जाते है। कवि ने योग का साकेत में दो बार प्रयोग किया है– एक बार हनुमान के उड़ने में और दूसरे वशिष्ठ द्वारा युद्ध का दृश्य उपस्थित करने में। इसके साथ ही शाप, सौगन्ध और शकुन (नेत्र आदि फड़कना) पर भी भारतीय जनता का विश्वास रहा है। साकेत में कौशल्या, सीता आदि के मुख से कवि ने उनकी ओर बार–बार संकेत किया हैं–

"तो मुझे निज राम की सौगन्ध।"
"तुम कहते हो पर यह मेरा दक्षिण नेत्र फड़कता है।"

**निष्कर्ष**

निष्कर्षतः हम कह सकते हैं कि 'साकेत' भारतीय संस्कृति का उज्ज्वल प्रतीक है। इसकी रामकथा भारतीय–संस्कृति की आत्मा है और कविवर मैथिलीशरण गुप्त भारतीय–परम्परा में विकसित विचार धारा के अनुयायी हैं। यही कारण है कि साकेत में आदि से अन्त तक भारतीय संस्कृति की भव्य झांकी प्रस्तुत की गई है। इसमें भारतीय संस्कृति के एक से बढ़कर एक भव्य–चित्र अंकित हैं। कवि ने भारतीय–संस्कृति के अथाह–सागर में गोते लगाकर जो भाव और विचार–रत्न प्राप्त किये हैं, वे ही इस काव्य की सांस्कृतिक चेतना के आधार हैं। राजन्य संस्कृति, प्रजा भाव, ऋषि गुरू का समादर, शत्रु और मित्र के प्रति यथार्थ, कर्तव्य बोध यथा प्रसंग साकेत में वर्णित हैं। व्यवहार क्षेत्र में कवि ने औपचारिक व्यवहार, शील एवं शिष्टाचार की सर्तकता भी प्रदर्शित की है। साकेत के पात्र सांस्कृतिक उत्कृष्टता के संवाहक हैं। मानव धर्म का समग्र निदर्शन ही कवि का अभीष्ट है और संस्कृति उसका साधन।

साकेत में कवि ने मानव को रावणवत् नहीं अपितु रामवत–आचरण करने का संदेश दिया है। उनका

विचार है कि विश्व का कल्याण मानवता के द्वारा ही हो सकता है, दानवता के द्वारा नहीं, उदारता के द्वारा ही हो सकता है। संकीर्णता के द्वारा नहीं अथवा राम की तरह से लोकहित की भावना को अपनाने से ही हो सकता है। रावण की तरह केवल अपने ही परिवार को समृद्ध बनाने से नहीं।"[18]

**सन्दर्भ ग्रंथ सूची**

1. *डा0 नगेन्द्र– साकेत एक अध्ययन, पृष्ठ 71 प्रकाशन वर्ष सन् 1970*
2. *मैथिलीशरण गुप्त–साकेत*
3. *डा0 नगेन्द्र–साकेत, एक अध्धयन पृष्ठ 72 प्रकाशन वर्ष सन् 1970*
4. *डा0 नगेन्द्र–साकेत, एक अध्धयन पृष्ठ 72–73 प्रकाशन वर्ष सन् 1970*
5. *गुप्त–साकेत, पृष्ठ 22*
6. *गुप्त–साकेत, पृष्ठ 18–19*
7. *गुप्त–साकेत, पृष्ठ 58*
8. *गुप्त–साकेत, पृष्ठ 114–115*
9. *गुप्त–साकेत, पृष्ठ 44*
10. *गुप्त–साकेत, पृष्ठ 231*
11. *गुप्त–साकेत, पृष्ठ 459*
12. *गुप्त–साकेत, पृष्ठ 95*
13. *गुप्त–साकेत, पृष्ठ 133*
14. *गुप्त–साकेत, पृष्ठ 235*
15. *गुप्त–साकेत, पृष्ठ 500*
16. *गुप्त–साकेत, पृष्ठ 202–203*
17. *गुप्त–साकेत, पृष्ठ 437*
18. *द्वारिका प्रसाद सक्सैना–साकेत में काव्य संस्कृति और दर्शन 290 प्रकाशन वर्ष सन् 1973*
19. *अन्य पाठ्य पुस्तके– डा० सूर्यप्रसाद दीक्षित–साकेत कुछ पुनर्विचार, प्रकाशन वर्ष सन् 1968*
20. *डा० दानवीर बहादुर– साकेत एक अध्धयन प्रकाशन वर्ष सन् 1974*